



2025:CGHC:17608

प्रकाशनार्थ अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुरनिर्णय सुरक्षित करने का दिनांक 31.01.2025निर्णय पारित करने का दिनांक 11.04.2025दाण्डिक अपील क्रमांक 687/2021

1- अविनाश मुराव पिता स्व. शिवप्रसाद मुराव, आयु लगभग 47 वर्ष, निवासी- तिफरा दाल मिल के पास, बजरंग होटल के पीछे, बिलासपुर जिला: बिलासपुर, छत्तीसगढ़

... अपीलार्थी

विरुद्ध

1- छत्तीसगढ़ राज्य, द्वारा: थाना सिरगिट्टी, जिला: बिलासपुर, छत्तीसगढ़

...उत्तरवादी

अपीलार्थी की ओर से

: श्री ऋषि राहुल सोनी, अधिवक्ता

उत्तरवादी/राज्य की ओर से

: सुश्री सुनीता साहू, पैनल अधिवक्ता

(माननीय न्यायमूर्ति श्री अरविंद कुमार वर्मा)

सी ए वी निर्णय

यह दाण्डिक अपील, दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 374(2) के अधीन अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश फास्ट ट्रैक कोर्ट (पोक्सो), बिलासपुर जिला- बिलासपुर (छ.ग.) द्वारा विशेष सत्र प्रकरण क्रमांक 401/2016 में दिनांक 01.04.2021 को पारित निर्णय के विरुद्ध प्रस्तुत की गई है, जिसके अन्तर्गत विद्वान अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश ने अपीलार्थी को निम्नानुसार सिद्धदोष एवं दण्डित किया है:

दोषसिद्धि	दण्डादेश
भारतीय दण्ड संहिता की धारा 363 के अधीन	5 वर्ष का कठोर कारावास व 200/- रुपए का अर्थदण्ड, अर्थदण्ड के संदाय के व्यतिक्रम पर 6 माह का अतिरिक्त कठोर कारावास ।
भारतीय दण्ड संहिता की धारा 365 के अधीन	5 वर्ष का कठोर कारावास व 200/- रुपए का अर्थदण्ड, अर्थदण्ड के संदाय के व्यतिक्रम पर 6 माह का अतिरिक्त कठोर कारावास ।
भारतीय दण्ड संहिता की धारा 366-क के अधीन	5 वर्ष का कठोर कारावास व 200/- रुपए का अर्थदण्ड, अर्थदण्ड के संदाय के व्यतिक्रम पर



	6 माह का अतिरिक्त कठोर कारावास ।
लैंगिक अपराधों से बालकों का संरक्षण अधिनियम, की धारा 5(ठ)/6 के अधीन	10 वर्ष का कठोर कारावास व 300/- रुपए का अर्थदण्ड, अर्थदण्ड के संदाय के व्यतिक्रम पर 1 वर्ष का अतिरिक्त कठोर कारावास ।
समस्त दण्डादेशों को साथ-साथ चलाए जाने हेतु निर्देशित किया गया है	

2. प्रकरण के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि अभियोक्त्री/पीड़िता, जो कक्षा दसवीं की छात्रा थी, अपने माता-पिता के साथ सिरगिट्टी, जिला बिलासपुर में रह रही थी। अभियोजन का प्रकरण यह है कि पीड़िता की बहन को जलने के कारण सिम्स बिलासपुर में भर्ती कराया गया था और दिनांक 30.01.2015 को उसकी मृत्यु हो गई। उक्त सूचना मिलने पर अपीलार्थी पीड़िता के घर गया क्योंकि वह परिवार का परिचित था। कुछ दिनों के पश्चात, जब पीड़िता शाला से लौट रही थी, रास्ते में अपीलार्थी ने उसे रोका और अपने घर ले गया, जहाँ उसने उसे खाना दिया और खाना खाने के बाद वह बेहोश हो गई और जब उसे होश आयी तो वह अपीलार्थी के साथ बिस्तर पर थी, उसके शरीर पर वस्त्र नहीं थे। अपीलार्थी ने उसे धमकी दी कि वह किसी को कुछ न बताए अन्यथा वह उसके परिवार के सदस्यों को मार देगा। तत्पश्चात अपीलार्थी ने उसे धमकाकर कई बार बलात्संग/लैंगिक शोषण किया। दिनांक 29.09.2015 को रात्रि लगभग 8 बजे पुनः अपीलार्थी ने उसे अपने घर आने को कहा तथा उसके पश्चात उसके पिता को फोन करके बताया कि उसकी पुत्री का अपहरण हो गया है तथा रिपोर्ट दर्ज कराने को कहा। इस प्रकरण की रिपोर्ट थाना सरकंडा में दर्ज कराई गई तथा अभियोक्त्री/पीड़िता के पिता द्वारा रिपोर्ट दर्ज कराई गई। उक्त रिपोर्ट के आधार पर अपीलार्थी के विरुद्ध अपराध क्रमांक 475/15 पंजीबद्ध किया गया। अभियोक्त्री का कथन दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के अधीन दर्ज किया गया, जिसमें उसने कथन किया कि अपीलार्थी व एक अन्य अभियुक्त प्रमल रात्रे उसे भड़काते थे तथा वर्तमान अपीलार्थी ने उसके साथ बलात्संग किया। उक्त रिपोर्ट के आधार पर अपीलार्थी के विरुद्ध धारा भारतीय दण्ड संहिता की धाराएँ 363, 366, 365, 376, 506 एवं लैंगिक अपराधों से बालकों का संरक्षण अधिनियम की धारा 4 व 6 के अधीन प्रथम सूचना रिपोर्ट (प्र.पी-24) पंजीबद्ध कर दिनांक 9.10.2015 को थाना सिरगिट्टी को प्रेषित किया गया तथा अपीलार्थी के विरुद्ध अपराध क्रमांक 298/2015 एवं प्रथम सूचना रिपोर्ट प्र.पी-25 पंजीबद्ध किया गया।

3. अन्वेषण के दौरान माता-पिता को सूचना प्र.पी-4 भेजा गया तथा प्र.पी-5 द्वारा सहमति प्राप्त कर बाल कल्याण समिति के समक्ष पीड़िता/अभियोक्त्री का कथन दर्ज किया गया तथा चिकित्सा परीक्षण के बाद प्र.पी-23 द्वारा स्लाइड तैयार की गई। नजरी नक्शा तैयार किया गया तथा प्र.पी-11 द्वारा पीड़िता की प्रगति-पत्रक जब्त किया गया । दिनांक 13.10.2015 को प्र.पी-15 तैयार कर प्र.पी-15 द्वारा प्राचार्य महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय माध्यमिक शाला बिलासपुर को भेजा गया तथा प्र.पी-28 द्वारा जब्त किया गया तथा उसकी छायाप्रति प्राप्त कर प्राचार्य को सौंपा गया । दिनांक 16.10.2015 को



प्र.पी-13 द्वारा पीड़िता एवं उसके माता-पिता से सहमति प्राप्त कर सूचना प्र.पी-15 तैयार किया गया। स्लाइड तैयार कर प्र.पी.-42 द्वारा जब्त किया गया तथा तत्पश्चात दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के अधीन पीड़िता का कथन दर्ज करने के लिए प्र.पी.-18 द्वारा सूचना भेजा गया तथा दिनांक 01.03.2016 को प्र.पी.-8 एवं प्र.16 द्वारा सूचना प्र.पी.-20 देकर आदर्श कॉन्वेंट प्राथमिक विद्यालय जूना बिलासपुर से पीड़िता का विद्यालय दाखिल खारिज पंजी प्राप्त किया गया। विद्यालय का दाखिल खारिज पंजी प्र.पी.-21 द्वारा जब्त किया गया तथा प्र.पी.-22 द्वारा छायाप्रति प्राप्त कर दिनांक 13.11.2015 को सायबर सेल को प्र.पी.-30 द्वारा अपीलार्थी की कॉल डिटेल् देने हेतु सूचित किया गया तथा दिनांक 28.12.2015 को प्र.पी.-32 द्वारा सब डिवीजनल मजिस्ट्रेट बैतूल, म.प्र. को अपीलार्थी की जंगम व स्थावर सम्पत्तियों के संबंध में सूचना प्रेषित किया गया तथा प्र.पी.-33 द्वारा सूचना प्राप्त की गई तथा तत्पश्चात अपीलार्थी के ठिकानों के संबंध में सूचना हेतु प्र.पी.-35 द्वारा सूचना भेजा गया। फरारी पंचनामा प्र.पी-31 तैयार किया गया तथा दिनांक 17.03.2016 को पुलिस अधीक्षक ने प्र.पी-34 द्वारा स्वीकृति ली तथा दिनांक 9.12.2015 को चित्रों एवं सेवा पुस्तिका प्राप्त करने हेतु उच्च न्यायालय को सूचना प्रेषित किया गया तथा प्र.पी-37 द्वारा सूचना दी गई। दिनांक 19.05.2019 को सूचना प्र.पी-36 तैयार किया गया तथा अपीलार्थी की उपस्थिति की सूचना प्र.पी-38 संलग्न की गई। पीड़िता व अन्य साक्षियों के कथन दर्ज किए गए, स्लाइड तैयार की गई तथा रासायनिक परीक्षण के लिए न्यायालयिक विज्ञान प्रयोगशाला को प्र.पी-40 द्वारा भेजी गई तथा प्र.पी-41 द्वारा रिपोर्ट संलग्न की गई। दिनांक 20.07.2016 को अपीलार्थी के विरुद्ध दिनांक 07.09.2016 को अभियोग-पत्र प्रस्तुत किया गया तथा दिनांक 24.06.2019 को उसने न्यायालय में आत्मसमर्पण किया। अभियुक्त ने अपना अपराध अस्वीकार किया, स्वयं को निर्दोष बताया एवं विचारण चाहा।

4. अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप साबित करने हेतु अभियोजन ने 16 साक्षियों का परीक्षण कराया है। अपीलार्थी का कथन भी दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन दर्ज किया गया, जिसमें उसने अपने विरुद्ध प्रस्तुत साक्ष्य को अस्वीकार किया और कथन किया कि वह निर्दोष है और उसे प्रकरण में झूठा फंसाया गया है।

5. अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्यों की विवेचना के उपरांत विद्वान विचारण न्यायालय ने अभियुक्त/अपीलार्थी को सिद्धदोष किया और उसे इस निर्णय के पैरा एक में उल्लेखित अनुसार दण्डित किया। अतः यह अपील प्रस्तुत की गई है।

6. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि अभियोजन प्रकरण को युक्तियुक्त संदेह से परे साबित करने में असफल रहा है। अभियोक्त्री की आयु के संबंध में कोई वैध स्वीकार्य साक्ष्य नहीं है कि घटना की तारीख पर वह अवयस्क थी और 18 वर्ष से कम आयु की थी। विद्वान विचारण न्यायालय यह समझने में



असफल रहा है कि अभियोजन यह स्पष्ट करने में असमर्थ था कि अभियोक्त्री की आयु उसके विद्यालय अभिलेख में किस आधार पर दर्ज की गई थी। उन्होंने प्रस्तुत किया कि रिपोर्ट विलम्ब से दर्ज की गई थी और इसे विचार में रखा जाना चाहिए। उनका तर्क है कि विलम्ब दर्ज की गई प्रथम सूचना रिपोर्ट घटना का एक रंगीन संस्करण देने के लिए एक बाद की सोच हो सकती है और विलम्ब को संतोषजनक रूप से स्पष्ट नहीं किया गया है। उनका तर्क है कि अपीलार्थी के विरुद्ध बलात्संग का आरोप विधि के ज्ञात ढंग से साबित नहीं हुआ है, अतः अपीलार्थी पर अधिरोपित दोषसिद्धि एवं दण्डादेश अपास्त किए जाने योग्य है। अपीलार्थी के विरुद्ध विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा दिए गए निष्कर्ष विकृत और अभिलेख पर प्रस्तुत साक्ष्य के विपरीत हैं और फलस्वरूप, इसे अपास्त किए जाने योग्य है। उन्होंने तर्क किया है कि अभियोजन के साक्षियों के कथनों/न्यायालयीन कथनों में तात्त्विक विरोधाभास और लोप हैं, जो अभियोजन के प्रकरण को अनुचित साबित करते हैं। इस प्रकार, अपील स्वीकार किए जाने योग्य है और आक्षेपित निर्णय को अपास्त किए जाने योग्य है। उन्होंने **राय संदीप उर्फ दीपू विरुद्ध राज्य (एनसीटी दिल्ली), 2012 एससीसी ऑनलाइन एससी 590** के प्रकरण में उच्चतम न्यायालय के निर्णय का अवलंब लिया है जिसमें निम्नानुसार अवधारित किया गया है:

“22. हमारे विचारित अभिमत में, 'उत्कृष्ट साक्षी' बहुत उच्च गुणवत्ता और क्षमता का होना चाहिए, इसलिए उसका कथन अप्रतिरोध्य होना चाहिए। ऐसे साक्षी के कथन पर विचारण न्यायालय को बिना किसी संकोच के इसे उसके वास्तविक मूल्य पर स्वीकार करने की स्थिति में होना चाहिए। ऐसे साक्षी की गुणवत्ता का परीक्षण करने के लिए, साक्षी की स्थिति महत्वहीन होगी और जो सुसंगत होगा वह ऐसे साक्षी द्वारा दिए गए कथन की सत्यता होगी। जो अधिक सुसंगत होगा वह कथन की सुसंगतता होगी, जो प्रारंभ से लेकर अंत तक, अर्थात् उस समय तक जब साक्षी प्रारंभिक कथन देता है और अंततः न्यायालय के समक्ष। यह स्वाभाविक होना चाहिए और अभियुक्त के रूप में अभियोजन के प्रकरण के अनुरूप होना चाहिए। ऐसे साक्षी के कथन में कोई मिथ्या नहीं होना चाहिए। साक्षी किसी भी लंबाई और चाहे कितनी भी कठिन प्रतिपरीक्षण का सामना करने की स्थिति में होना चाहिए और किसी भी परिस्थिति घटना का तथ्य, इसमें शामिल व्यक्ति, साथ ही, इसका क्रम में किसी भी संदेह की संभावना नहीं होनी चाहिए। इस प्रकार के कथन का अन्य सहायक साक्ष्य जैसे बरामदगी, प्रयुक्त हथियार, अपराध का ढंग, वैज्ञानिक साक्ष्य और विशेषज्ञ का अभिमत से हर एक के साथ सह-संबंध होना चाहिए। उक्त कथन को हर दूसरे साक्षी के कथन से लगातार मेल खाना चाहिए। यह भी कहा जा सकता है कि यह परिस्थितिजन्य साक्ष्य के प्रकरण



में लागू किए जाने वाले परीक्षण के समान होना चाहिए, जहां अभियुक्त को उसके विरुद्ध कथित अपराध की दोषसिद्धि हेतु परिस्थितियों की श्रृंखला में कोई भी लुप्त कड़ी नहीं होनी चाहिए। केवल तभी जब ऐसे साक्षी का कथन उपरोक्त परीक्षण के साथ-साथ लागू किए जाने वाले अन्य सभी समान परीक्षणों को योग्य बनाता है, तो यह माना जा सकता है कि ऐसे साक्षी को 'उत्कृष्ट साक्षी' कहा जा सकता है, जिसका कथन न्यायालय द्वारा बिना किसी संपुष्टि के स्वीकार किया जा सकता है और जिसके आधार पर दोषी को दंडित किया जा सकता है। अधिक सटीक होने के लिए, अपराध के मूल अवधारणा पर उक्त साक्षी का कथन यथावत रहना चाहिए, जबकि अन्य सभी सहायक सामग्री, अर्थात् मौखिक, दस्तावेजी और तात्विक वस्तुएं, तात्विक विवरणों में उक्त संस्करण से मेल खानी चाहिए ताकि अपराध की सुनवाई करने वाला न्यायालय, अपराधी को आक्षेपित आरोप की दोषसिद्धि हेतु अन्य सहायक सामग्रियों को छानने के लिए मूल संस्करण का अवलंब ले सके।

7. उन्होंने निर्मल प्रेमकुमार व अन्य विरुद्ध राज्य प्रतिनिधि पुलिस निरीक्षक द्वारा (दाण्डिक अपील क्रमांक 11098/2024) प्रकरण में उच्चतम न्यायालय के निर्णय का भी अवलंब लिया है, जिसमें निम्नानुसार अवधारित किया गया है:

15. उपरोक्त निर्णयों से यह निष्कर्ष निकलता है कि ऐसे प्रकरणों में जहां साक्षी न तो पूर्णतः विश्वसनीय हैं और न ही पूर्णतः अविश्वसनीय, न्यायालय को घटना की वास्तविक उत्पत्ति को ज्ञात करने का प्रयत्न करना चाहिए। न्यायालय बिना किसी अतिरिक्त संपुष्टि के पीड़ित पर "उत्कृष्ट साक्षी" के रूप में अवलंब नहीं ले सकता है, परंतु गुणवत्ता और विश्वसनीयता असाधारण रूप से उच्च होनी चाहिए। अभियोक्त्री का कथन प्रारंभ से अंत तक (सामान्य असंगतियों को छोड़कर), प्रारंभिक कथन से मौखिक साक्ष्य तक सुसंगत होना चाहिए, जिससे अभियोजन के प्रकरण में कोई संदेह उत्पन्न न हो। जबकि लैंगिक अपराध के प्रकरणों में पीड़ित का मौखिक साक्ष्य सामान्यतः पर्याप्त होता है, अभियोक्त्री का अविश्वसनीय या अपर्याप्त विवरण, जिसमें पहचानी गई खामियां और अंतराल हों, दोषसिद्धि को कठीन बना सकता है।

8. किरिशन कुमार मलिक विरुद्ध हरियाणा राज्य (2011) 7 एससी 130 के प्रकरण में उच्चतम न्यायालय के एक अन्य निर्णय में, यह निम्नानुसार अवधारित किया गया है:



“31. इसमें कोई संदेह नहीं है कि बलात्संग के अपराध के लिए किसी अभियुक्त की दोषसिद्धि हेतु अभियोक्त्री का एकमात्र साक्ष्य पर्याप्त है, बशर्ते कि वह विश्वास उत्पन्न करे और पूर्णतः से विश्वसनीय, निष्कलंक हो और उत्कृष्ट गुणवत्ता का हो। परंतु, इस प्रकरण में अभियोक्त्री के साक्ष्य में कई खामियां दिखाई गई हैं, दण्डिक अपील @ एस.एल.पी. (दण्डिक) क्रमांक 8021/2009 पहले ही प्रस्तुत किए जा चुके हैं, जिससे ज्ञात होता है कि उसका साक्ष्य इस श्रेणी में नहीं आता है और अपीलार्थी को उक्त अपराधों के दोषसिद्धि हेतु उस का अवलंब नहीं लिया जा सकता है।”

9. रामदास व अन्य विरुद्ध महाराष्ट्र राज्य, (2007) 2 एससीसी 170 के प्रकरण में उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि:

23. यह निस्संदेह सत्य है कि बलात्संग के प्रकरण में दोषसिद्धि केवल अभियोक्त्री के मौखिक साक्ष्य के आधार पर हो सकती है, परंतु ऐसा उस प्रकरण में किया जा सकता है जहां न्यायालय अभियोक्त्री की सत्यता के विषय में आश्वस्त हो और ऐसी कोई परिस्थिति न हो जो उसकी सत्यता पर संदेह की छाया डालती हो। यदि अभियोक्त्री का साक्ष्य ऐसी गुणवत्ता का है जो केवल उसकी मौखिक साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्धि के आदेश को यथावत रखने के लिए पर्याप्त हो सकता है। इस प्रकरण में हमें उसका साक्ष्य ऐसी गुणवत्ता का प्रतीत नहीं होता है।

राज्य के अधिवक्ता ने तर्क किया कि ऐसे प्रकरणों में प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज करने में विलम्ब तत्वहीन है। प्रस्ताव को स्वीकार करने हेतु व्यापक रूप से व्यक्त किया गया है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज करने में केवल विलम्ब अभियोजन के प्रकरण के लिए आवश्यक नहीं है। यद्यपि, यह तथ्य कि रिपोर्ट विलम्ब से दर्ज की गई थी, एक सुसंगत तथ्य है जिस पर न्यायालय को विचार करना चाहिए।”

10. उन्होंने डोला उर्फ डोलागोबिंदा प्रधान व अन्य विरुद्ध ओडिशा राज्य, एआईआर 2018 एससी 4020 के प्रकरण में उच्चतम न्यायालय के निर्णय का अवलंब लिया है, जिसमें निम्नलिखित उल्लेख किया गया है:



“9. यह सत्य है कि बलात्संग के प्रकरण में अभियुक्त को अभियोक्त्री की एकमात्र साक्ष्य के आधार पर सिद्धदोष किया जा सकता है, यदि यह न्यायालय के मन में विश्वास जगाने में सक्षम है। यदि अभियोक्त्री द्वारा किया गया कथन किसी भी चिकित्सा साक्ष्य द्वारा समर्थित नहीं है या संपूर्ण आस-पास की परिस्थितियाँ अत्यधिक असंभव हैं और अभियोक्त्री द्वारा स्थापित प्रकरण को मिथ्या साबित करती हैं, तो न्यायालय अभियोक्त्री के एकमात्र साक्ष्य पर कार्रवाई नहीं करेगी। अदालतें अभियोक्त्री की एकमात्र साक्ष्य को स्वीकार करने में अत्यधिक सावधानी बरतेंगी जब पूरा प्रकरण असंभव हो और होने की संभावना न हो।”

11. **सेकरन विरुद्ध तमिलनाडु राज्य, दण्डिक अपील क्रमांक 2294/2010** के प्रकरण में उच्चतम न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया है:

“अपीलार्थी द्वारा कथित अपराध के बाद महज फरार हो जाना और इतने लंबे समय तक लापता रहना ही उसके अपराध या उसके दोषी विवेक को स्थापित नहीं कर सकता। कुछ प्रकरणों में फरार होना एक सुसंगत साक्ष्य हो सकता है, परंतु इसका साक्ष्य मूल्य आसपास की परिस्थितियों पर निर्भर करता है। अतः यह एकमात्र परिस्थिति अभियोजन के लिए लाभकारी नहीं है।”

12. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत तर्कों का विरोध किया और तर्क किया कि अभियोक्त्री घटना के समय अवयस्क थी और उसकी आयु 18 वर्ष से कम थी, जो विद्यालय दाखिल खारिज पंजी (प्र.पी.-22) से साबित होता है जिसमें अभियोक्त्री की जन्म तिथि 13.01.2000 दर्ज है। अभियोक्त्री की आयु अवधारण हेतु विद्यालय दाखिल खारिज पंजी स्वीकार्य साक्ष्य है। उनका तर्क है कि अपीलार्थी तीन वर्ष तक फरार रहा था और केवल दिनांक 24.06.2019 को उसने न्यायालय के समक्ष अभ्यर्पण किया। आगे उनका तर्क है कि विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को उचित रूप से सिद्धदोष व दण्डित किया है, जिसमें इस न्यायालय द्वारा कोई हस्तक्षेप नहीं किया जाना चाहिए।

13. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्तागण के तर्कों को सुना है तथा अभिलेख का अत्यंत सावधानीपूर्वक परिशीलन किया है।

14. अभियोक्त्री की आयु पर विचार करने हेतु सर्वप्रथम अभियोजन द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य का परीक्षण करना है। अभियोजन ने विद्यालय दाखिल खारिज पंजी (प्र.पी.-22) का अवलंब लिया है, जिसे



अ.सा.-10, श्रीमती शोभा कश्यप, प्राथमिक विद्यालय अमरनाथ साव आदर्श कॉन्वेंट विद्यालय, जूना बिलासपुर की प्रधानाचार्या द्वारा साबित करने का प्रयत्न किया गया है। उन्होंने विद्यालय दाखिल खारिज पंजी, क्रम संख्या 2373 में पीड़िता का नाम एवं जन्म तिथि 13.01.2000 अंकित की है, कक्षा 1 में विद्यालय में प्रवेश की तिथि 01.07.2005 थी।

15. श्रीमती शोभा कश्यप (अ.सा.-10) प्राथमिक विद्यालय अमरनाथ साव आदर्श कॉन्वेंट विद्यालय, जूना बिलासपुर की प्रधानाचार्या हैं। उनका कथन है कि विद्यालय के दाखिल खारिज पंजी प्र.पी-21, क्रम संख्या 2373 में पीड़िता का नाम और उसकी जन्मतिथि 13.01.2000 अंकित है, विद्यालय में प्रवेश की तिथि 01.07.2005 है, वह कक्षा 1 में है। विद्यालय के दाखिल खारिज पंजी में जन्मतिथि की लेखिका वह स्वयं है।

16. अपीलार्थी के अधिवक्ता का तर्क है कि पीड़िता की आयु विधि के अनुसार साबित नहीं हुई है।

17. अभिलेखों, साक्षियों के कथन, प्रभारी प्रधानाध्यापक के कथन, विद्यालय के दाखिल खारिज पंजी जिसमें अभियोक्त्री की विद्यालय में जन्मतिथि दर्ज की गई है, का अवलोकन करने के पश्चात 13.01.2000 दर्ज है। यद्यपि विद्यालय दाखिल पंजी के लेखक का परीक्षण नहीं कराया गया है, परंतु माता-पिता के कथनों के अनुसार अभियोक्त्री की आयु लगभग 15 वर्ष है, जिसका अर्थ है कि घटना के समय अभियोक्त्री की आयु 18 वर्ष से कम थी।

18. लैंगिक अपराधों से बालकों का संरक्षण अधिनियम, 2012 (एतस्मिन् पश्चात जिसे "पोक्सो" कहा जाएगा) के अधीन अभियोक्त्री की आयु का अवधारण **महादेव विरुद्ध महाराष्ट्र राज्य व अन्य - (2013) 14 एससीसी 637** में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा विचार किया गया है, जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि:

“अभियोक्त्री की अपराध की तिथि पर आयु के अवधारण हेतु मैट्रिकुलेशन या समकक्ष प्रमाण पत्र में दी गई तिथि को सर्वप्रथम विचार में रखा जाना चाहिए और यदि वह उपलब्ध नहीं है, तो अभियोक्त्री की आयु अवधारित करने के अन्य साधनों का सहारा लिया जाना चाहिए। इस प्रस्ताव को निर्धारित करते समय, उच्चतम न्यायालय ने किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) नियम, 2007 (एतस्मिन् पश्चात जिसे “2007 के नियम” के रूप में संदर्भित किया गया है) के नियम 12(3) से प्रेरणा ली। उक्त नियम ने विधि से संघर्षरत किशोर की आयु का आकलन करने के विभिन्न साधन प्रदान किए।



माननीय उच्चतम न्यायालय ने पोक्सो के अधीन अभियोक्त्री की आयु के अवधारण हेतु समान मापदंडों को लागू किया। 2007 के नियमों के नियम 12(3) के अधीन, आयु निर्धारण जांच सर्वप्रथम किशोर की आयु से संबंधित साक्ष्य मैट्रिकुलेशन या समकक्ष प्रमाण पत्र से प्राप्त करेगी, यदि उपलब्ध हो। [आर. 12(3)(क)(i)] और इसकी अनुपस्थिति में, पहले विद्यालय से जन्म तिथि प्रमाण पत्र (प्ले विद्यालय के अतिरिक्त) [आर. 12(3)(क)(ii)], और इसकी अनुपस्थिति में, नगरपालिका, निगम या पंचायत द्वारा दिया गया जन्म प्रमाण पत्र [आर. 12(3)(क)(iii)]।

तत्पश्चात, उच्चतम न्यायालय नियम 12(3)(ख) का संदर्भ देता है और यह अभिमत देता है कि केवल नियम 12(3)(क) (i) से (iii) में दिए गए किसी भी साधन की अनुपस्थिति में ही किशोर की आयु के अवधारण हेतु चिकित्सा राय मांगी जा सकती है। तत्पश्चात, उच्चतम न्यायालय पोक्सो के अधीन अभियोक्त्री की आयु के अवधारण हेतु समान मानक लागू करता है।

15. इस न्यायालय के समक्ष प्रश्न यह है कि क्या महादेव पूर्वोक्त में उच्चतम न्यायालय का निर्णय सभी विचारण न्यायालयों को किशोर की जन्म तिथि स्वीकार करने के लिए बाध्य करता है अभियोक्त्री के रूप में विद्यालय पंजी में दर्ज की गई एक अमिट तथ्य के रूप में, ऐसी प्रविष्टि की विश्वसनीयता की किसी भी जांच को प्रतिबंधित करता है? हरियाणा वित्तीय निगम और अन्य विरुद्ध जगदंबा ऑयल मिल्स व अन्य (2002) 3 एससीसी 496 में, उच्चतम न्यायालय ने पैरा 19 में अभिनिर्धारित किया कि निर्णयों की व्याख्या विधि के रूप में नहीं की जानी चाहिए और न्यायालयों की टिप्पणियों को यूक्लिड के प्रमेय की गणितीय कठोरता नहीं दी जानी चाहिए। न्यायालय की टिप्पणियों को उन तथ्यों की पृष्ठभूमि में समझा जाना चाहिए जिनके आधार पर निर्णय पारित किया गया था।

19. महादेव (पूर्वोक्त) में पारित निर्णय के सरल पठन से ज्ञात होता है कि उच्चतम न्यायालय को अभियोक्त्री की आयु के अवधारण हेतु नियम 8, 2007 के नियम 12(3) (i) से (iii) के प्रावधानों से साधन उधार लेने पड़े, क्योंकि पोक्सो में कोई समान प्रावधान नहीं है। यद्यपि, उच्चतम न्यायालय ने कभी भी अभियोक्त्री की जन्म तिथि की विश्वसनीयता के बारे में न्यायालयों द्वारा जाँच करने पर रोक लगाने का आशय नहीं किया, जैसा कि विद्यालय पंजी में दर्ज है। पोक्सो में कड़े और कठोर प्रावधानों के दृष्टिगत ऐसा दृष्टिकोण और भी अधिक संधारणीय है, जिसके अनुसार पोक्सो के प्रावधानों के अधीन



अभियुक्त के अपराध का पता लगाने हेतु न्यायालय द्वारा जाँच विस्तृत और गहन होनी चाहिए ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि किसी निर्दोष को सिद्धदोष या दोषी को दोषमुक्त करने से न्याय में कोई चूक न हो। इस निर्णय में यह आवश्यक नहीं है कि न्यायालय अभियोक्त्री की विद्यालय पंजी में दर्ज जन्मतिथि को सत्य मानें।”

20. यह निर्विवाद है कि छात्र की जन्म तिथि से संबंधित जानकारी विद्यालय पंजी में दर्ज की गई है। जानकारी का पहला स्रोत नगर पालिका, निगम, या पंचायत या किसी अन्य स्थानीय प्राधिकरण / निकाय द्वारा जारी बालकों का जन्म प्रमाण पत्र है, जो स्वयं उस अस्पताल द्वारा दिए गए प्रमाण पत्र पर आधारित है जहाँ बालक का जन्म हुआ था। जानकारी का दूसरा स्रोत माता-पिता / अभिभावक द्वारा दी गई बालकों की जन्म तिथि है। जहां बालकों / अभियोक्त्री की जन्म तिथि से संबंधित जानकारी का स्रोत माता-पिता / अभिभावक का कथन है, वहां न्यायालय को स्वयं को संतुष्ट करना होगा कि माता-पिता / अभिभावक ने अपने मौखिक साक्ष्य में सकारात्मक रूप से ऐसा व्यक्त किया है।

21. अब, वर्तमान प्रकरण के तथ्यों पर लौटते हुए तथा अभियोजन द्वारा एकत्र साक्ष्यों पर विचार करने तथा माननीय उच्चतम न्यायालय के उपरोक्त निर्णयों के आलोक में, ऐसा प्रतीत होता है कि पीड़िता ने घटना का लगातार वर्णन किया है कि घटना की तिथि को अपीलार्थी उसे अपने घर ले गया, उसे चावल और दाल दी तथा भोजन करने के पश्चात वह बेहोश हो गई। उसने कहा है कि अपीलार्थी ने स्वयं कुछ नहीं खाया था तथा जब उसे होश आया तो उसने स्वयं को अपीलार्थी के साथ बिस्तर पर नग्न पाया तथा उसने उसे धमकी दी कि वह घटना के बारे में किसी को न बताए अन्यथा वह उसके परिवार के सदस्यों को मार देगा। इसके पश्चात, वह कई अवसरों पर उसे धमकाता रहा तथा बार-बार उसके साथ लैंगिक संबंध बनाता रहा। अभियोजन का कथन, प्रारंभिक कथन से लेकर मौखिक साक्ष्य तक, प्रारंभ से अंत तक (सामान्य असंगतियों को छोड़कर) सुसंगत रहा है, जिससे अभियोजन के प्रकरण में कोई संदेह उत्पन्न नहीं होता। अभियोजन के पास इस तथ्य को साबित करने के लिए पुख्ता और कानूनी रूप से स्वीकार्य सबूत हैं कि पीड़िता घटना की तारीख को अवयस्क थी और उसकी आयु 18 वर्ष से कम थी। आदर्श कॉन्वेंट विद्यालय, जूना बिलासपुर से प्राप्त विद्यालय दाखिल खारिज पंजी जिसमें पीड़िता की जन्म तिथि 13.01.2000 बताई गई है और उसका प्रवेश कक्षा 1 में वर्ष 01.07.2005 में हुआ था।

22. विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या अपीलार्थी ने अवयस्क पीड़िता के साथ बलात्संग किया है?

23. अभियोक्त्री (अ.सा.-2) ने बताया कि वह अपने माता-पिता के साथ बहतराई, सरकंडा में रहती थी। उसने बताया कि वे चार भाई-बहन हैं तथा उसकी बहन रानी आयु लगभग 8 वर्ष की जलने से दिनांक 28.11.2014 को मृत्यु हो गई थी। जब उसकी बहन शिशु भवन, ईदगाह चौक स्थित अस्पताल



में भर्ती थी, तब वार्ड बॉय प्रमल रात्रे ने उसकी देखरेख की। उसने बताया कि अस्पताल में जब वह अपनी बहन के पलंग के पास बैठी थी, तब लगभग 5-6 बजे वार्ड बॉय प्रमल रात्रे ने उसका हाथ पकड़ा तथा उसके साथ लैंगिक उत्पीड़न करने का प्रयत्न किया तथा जब उसने विरोध किया कि वह चिकित्सक को बता देगी, तो उसने उसे गंभीर परिणाम भुगतने की धमकी दी। उसने घटना की जानकारी अपने माता-पिता को नहीं दी। दिनांक 30.01.2015 को जब उसकी बहन की मृत्यु हो गई, तब वर्तमान अपीलार्थी उसके घर आया। उस समय पीड़िता के माता-पिता दयालबंद, बिलासपुर में रहते थे और उन्होंने बताया कि वह उच्च न्यायालय में रीडर है और तिफरा में किराए से रहता है। दूसरे दिन अपीलार्थी उनके घर आया और उसके पिता से प्रकरण दर्ज कराने को कहा। बहन की मौत के 10-12 दिन बाद जब वह दोपहर करीब 12-12.30 बजे विद्यालय से लौट रही थी, तो अपीलार्थी अपनी मोटरसाइकिल से आया और उसे अपने घर बुलाया और वह उसके साथ चली गई, जहां कोई मौजूद नहीं था। अपीलार्थी ने उसे चावल और दाल दी और स्वयं खाना नहीं खाया। कुछ देर बाद उसे सिर में दर्द हुआ और वह बेहोश हो गई। होश में आने पर उसने स्वयं को बिस्तर पर अपीलार्थी के साथ नग्न अवस्था में देखा। उसे दर्द हो रहा था और अपीलार्थी ने उसे धमकी दी कि वह घटना के बारे में किसी को न बताए, नहीं तो वह उसके परिवार के सदस्यों को मार देगा और वह ऑटो से घर आ गई। उसकी मां ने जब उससे पूछा कि वह विद्यालय से देर से क्यों आई तो उसने बताया कि विद्यालय में कुछ कार्यक्रम था इसलिए वह देर से आई। 3-4 दिन बाद जब वह फिर साइकिल से विद्यालय जा रही थी तो अपीलार्थी अपनी मोटरसाइकिल पर आया और उसे अपने साथ अपने घर ले गया जहां उसने उसे दूध पिलाया और वह बेहोश हो गई और होश में आने के बाद उसने स्वयं को अपीलार्थी के साथ उसके बिस्तर पर पाया और उसके साथ बलात्संग किया गया। घटना के तीन-चार दिन बाद फिर अपीलार्थी अपनी मोटरसाइकिल पर आया और उसे अपने घर ले गया, उसके बैग की जांच की और मोबाइल पाया, उसका नंबर लिया और उसे रस्सी से बांध दिया, उसके वस्त्र उतार दिए और उसके साथ बलात्संग किया। इसके बाद उसने उसे खोल दिया और जहां से उठाया था वहां छोड़ दिया और उसने उसके साथ 10-12 बार बलात्संग किया।

24. दिनांक 29.09.2015 को दोपहर लगभग 12 बजे उसने उसके पिता को फोन करके ईदगाह चौक के पास मिलने को कहा और उसे धमकाया कि वह घटना के बारे में किसी को न बताए। जब वह घटना स्थल पर पहुंची तो अभियुक्त आया और उसे मोटरसाइकिल में बिठाकर ले गया और उसे समझाया कि वह डॉ. गिरी के विरुद्ध अपहरण की झूठी रिपोर्ट दर्ज कराएगा और योजना के अनुसार 5-6 व्यक्ति सफेद कार में आए और उसका अपहरण कर लिया और उसके हाथ काट दिए। कुछ देर बाद उसने उसके पिता को फोन करके बताया कि उसकी पुत्री का अपहरण हो गया है। कुछ देर बाद उसने फिर उसके पिता को फोन करके बताया कि उसकी पुत्री बरामद हो गई है और वह अभियुक्त के घर आया जहां उसने योजना के अनुसार उसे पूरी बात बताई। इसके बाद वे अभियुक्त के साथ थाना सरकंडा गए



और रिपोर्ट दर्ज कराई। रिपोर्ट दर्ज होने के बाद उसका कथन दर्ज किया गया और उसे प्र.पी-4 के अधीन चिकित्सा परीक्षण के लिए जिला अस्पताल भेजा गया तथा प्र.पी-5 के अधीन सहमति मिलने के बाद चिकित्सक द्वारा उसकी जांच की गई। दिनांक 11.10.2015 को प्र.पी-6 के अधीन घटनास्थल का नक्शा तैयार किया गया, प्र.पी-8 और प्र.पी-9 के अधीन न्यायिक मजिस्ट्रेट के समक्ष धारा 164 सीआरपीसी के अधीन कथन दर्ज किया गया, जिसमें उसने कई बार अपीलार्थी द्वारा बलात्संग किए जाने की बात कही थी। उसने आगे कहा है कि उसने बाल कल्याण समिति, बिलासपुर के समक्ष प्र.पी-10 के अधीन कथन दिया था कि अपीलार्थी ने उसका लैंगिक शोषण किया था। उसने कहा है कि पुलिस वालों ने जब्ती ज्ञापन प्र.पी-11 और जब्ती प्रगति रिपोर्ट 2013-14 तैयार की थी, जिसमें जन्म तिथि 13.01.2000 बताई गई है।

25. प्रतिपरीक्षण में उसने माना है कि उसकी बहन डॉ. गिरी के क्लिनिक में भर्ती थी और उपचार के दौरान उसकी मृत्यु हो गई थी और अतः चिकित्सक के विरुद्ध शिकायत दर्ज कराई गई थी जो उच्च न्यायालय में लंबित है। उसने कथन किया है कि अपीलार्थी ने प्रकरण में अधिवक्ता उपलब्ध कराने में सहायता की थी और वह अपीलार्थी से चाचा की तरह व्यवहार करती थी।

26. अभियोक्त्री (अ.सा.-4) की मां ने कथन किया है कि रात करीब 8-9 बजे जब वे टीवी देख रहे थे, तो उसके पति को फोन आया कि उनकी पुत्री लापता है और कुछ समय बाद पुनः अपीलार्थी का फोन आया कि अभियोक्त्री मिल गई है और फिर अपीलार्थी उसे लेकर पुलिस थाना गया और रिपोर्ट दर्ज कराई। इसके बाद, उसका पति और पुत्री घर आ गए और कुछ देर बाद महिला थाना से पुलिसकर्मी आए और अभियोक्त्री को बाल कल्याण समिति के समक्ष ले गए और प्र.पी-13 के अधीन उसकी जांच के लिए सहमति लेने के पश्चात प्रगति-पत्रक प्र.पी-12 को जब्त कर लिया गया।

27. अभियोक्त्री (अ.सा.-5) के पिता ने कथन किया कि पीड़िता सुबह विद्यालय जाती थी और दोपहर 12-1 बजे वापस आती थी। उन्होंने बताया कि वे अभियुक्त के विरुद्ध रिपोर्ट दर्ज कराने के लिए खोज रहे थे क्योंकि उनकी पुत्री की मृत्यु हो गई थी और उस समय उनकी मुलाकात अपीलार्थी से हुई जो कि कतियापारा, बिलासपुर में रहता था और उन्हें ज्ञात हुआ कि अपीलार्थी उच्च न्यायालय में कार्यरत है। अपीलार्थी ने अधिवक्ता के लिए सहायता प्रदान करने में सहायता की। उन्होंने अपनी पुत्री के अपहरण की घटना के बारे में बताया कि अपीलार्थी ने उनसे अपनी पुत्री की बरामदगी के बारे में पुलिस थाना में रिपोर्ट दर्ज कराने के लिए कहा था। इसके बाद पुलिस वाले उनकी पुत्री को चिकित्सा परीक्षण के लिए ले गए और अगले दिन पुलिस आई और उनकी पुत्री को महिला थाना ले गई और वहां से उसे संप्रेक्षण गृह ले गई। पुलिसकर्मियों ने उनसे प्रकरण वापस लेने के लिए कहा था। इसके बाद पुलिस ने तीन मौकों पर अभियोक्त्री के कथन दर्ज करने के लिए बार-बार नोटिस भेजा था। प्रतिपरीक्षण में उसने कथन किया है



कि वह पुलिस से बहुत डरता है। उसकी पुत्री को 4-5 दिन तक संप्रेक्षण गृह में रखा गया था और अतः उसने अपनी पुत्री की अभिरक्षा के लिए उच्च न्यायालय में अर्जी दाखिल की है।

28. डॉ. रमा घोष (अ.सा.-09) जिला अस्पताल, बिलासपुर में चिकित्सा अधिकारी हैं, जिन्होंने अभियोक्त्री का चिकित्सा परीक्षण किया और अपनी रिपोर्ट (प्र.पी.-4) दी, जिसमें उन्होंने कथन किया कि हाइमन टूटी हुई पाई गई और वह संभोग की आदी थी और दो स्लाइड तैयार की गई और रासायनिक परीक्षण हेतु प्रेषित की गई।

29. हिमाचल प्रदेश राज्य विरुद्ध संजय कुमार उर्फ सनी (2017) 2 एससीसी 1: (एआईआर 2017 एससी 463) के प्रकरण में उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि:-

"यह सुस्थापित है कि लैंगिक अपराधों के प्रकरणों में एक पीड़िता का मौखिक साक्ष्य महत्वपूर्ण है और जब तक कि ऐसे बाध्यकारी कारण न हों जो किसी कथन की संपुष्टि की खोज करने के लिए आवश्यक हों, न्यायालयों को अभियुक्त की दोषसिद्धि हेतु अकेले लैंगिक उत्पीड़न की पीड़िता के मौखिक साक्ष्य पर कार्रवाई करने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं है कि उसका मौखिक साक्ष्य विश्वास जगाता हो। ऐसे प्रकरणों में एक नियम के रूप में उस पर अवलंब करने से पूर्व एक कथन की संपुष्टि की मांग करना, चोट पर छिड़कने के समान होगा। इसलिए, अभियोक्त्री के कथन को समग्र रूप से लिया जाना चाहिए। यह दोहराने की आवश्यकता नहीं है कि बलात्संग की पीड़िता कोई सहयोगी नहीं है और उसके साक्ष्य पर संपुष्टि के बिना कार्रवाई की जा सकती है। वह एक घायल साक्षी की तुलना में उच्च स्थान पर है। यदि न्यायालय को उसके कथन को स्वीकार करना कठिन प्रतीत होता है, तो वह कुछ ऐसे साक्ष्य से संपुष्टि की मांग कर सकती है जो उसके कथन को आश्वासन देता है। संपुष्टि पर बल देने के अतिरिक्त, दुर्लभतम प्रकरणों में, किसी दूसरे की वासना का शिकार होने वाले व्यक्ति को अपराध में भागीदार के समान मानना और इस प्रकार नारीत्व का अपमान करना है।

30. अवयस्क पीड़िता की साक्ष्य की विवेचना के संबंध में, यह निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया है:-



"किसी भी प्रकार से यह सुझाव नहीं दिया जाता है कि जब भी बलात्संग का ऐसा आरोप लगाया जाता है, जहां पीड़ित एक बालिका है, तो इसे सत्य मानकर अभियुक्त को सिद्धदोष किया जाना चाहिए। हमने पहले ही इस बात पर चर्चा की है कि अभियोजन के साक्ष्य की जांच और विश्लेषण किस तरह से किया जाना चाहिए ताकि उसमें सत्यता को ज्ञात किया जा सके और यह सुनिश्चित किया जा सके कि पीड़िता का कथन विश्वसनीय है। साथ ही, सभी आवश्यक सावधानियों को अपनाने के बाद, जब यह पाया जाता है कि अभियोजन का कथन का अवलंब किए जाने योग्य है, तो प्रकरण को ऐसे प्रकरणों में आवश्यक सभी संवेदनशीलता के साथ निपटान किया जाना चाहिए। ऐसी स्थिति में व्यक्ति को जीवन की वास्तविकताओं की भी जांच की जानी चाहिए।"

विधि का स्थापित प्रस्ताव यह है कि बलात्संग के प्रकरण में पीड़िता के कथन को भी घटना की व्यापक संभावना को विचार में रखते हुए अत्यंत संवेदनशीलता के साथ आलोचनात्मक रूप से देखा जाना चाहिए। यह समझा जा सकता है कि जब पीड़िता जैसी स्वाभिमानी स्त्री अपने सम्मान के विरुद्ध अपमानजनक कथन देने के लिए न्यायालय में आगे आती है, जैसे कि उसके साथ बलात्संग किया गया हो, तो यह कल्पना से परे है कि पीड़िता के माता-पिता अपनी ही पुत्री के चरित्र हनन के नाम पर मिथ्या प्रकरण गढ़ेंगे, यद्यपि पीड़िता एक अवयस्क बालिका थी, परंतु किसी भी परिस्थिति में वह सभी गुणों से युक्त है, उसके सामने विनम्रता से पेश आना चाहिए।

31. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत यह तर्क कि अभियोक्त्री के कथन में विरोधाभास है, अपीलार्थी के लिए कोई सहायक नहीं है। माननीय उच्चतम न्यायालय ने "अप्पाभाई विरुद्ध गुजरात राज्य" [1988 पूरक एससीसी 241] में अवधारित किया कि—

"13....न्यायालय को साक्ष्यों की विवेचना करते समय छोटी-मोटी विसंगतियों को अनावश्यक महत्व नहीं दिया जाए। जो विसंगतियां अभियोजन के प्रकरण के मूल संस्करण को प्रभावित नहीं करती हैं, उन्हें खारिज किया जाए जो विसंगतियां धारणा या अवलोकन की सामान्य त्रुटियों के कारण हैं, उन्हें महत्व नहीं दिया जाए। स्मृति की कमी के कारण होने वाली त्रुटियों को उचित छूट दी जा सकती है। न्यायालय को विभिन्न



प्रकरणों में व्यक्तियों और प्रकरणों के अपने विशाल अनुभव का उपयोग करते हुए किसी भी साक्षी द्वारा दिए गए अतिरंजित संस्करण को छोड़कर अभिलेख पर प्रस्तुत संपूर्ण साक्ष्य का मूल्यांकन करना चाहिए। जब ऐसे साक्षी द्वारा आक्षेपित कुछ तथ्यों के संबंध में संदेह उत्पन्न होता है, तो उचित तरीका यह है कि उस तथ्य को अनदेखा कर दिया जाए, जब तक कि वह प्रकरण की जड़ में न चला जाए, ताकि अभियोजन की पूरी कहानी ध्वस्त न हो जाए। आजकल साक्षी अलंकरण जोड़ते रहते हैं। शायद इसलिए कि उनकी साक्ष्य को न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया जाता है, न्यायालयों को ऐसे साक्षियों के साक्ष्य पर पूर्णतः अविश्वास नहीं करना चाहिए, यदि वे अन्यथा विश्वसनीय हैं....”

ii. इस प्रकरण में अभियोक्त्री को धमकाने के संबंध में जो कथित विसंगतियां बताई गई हैं, वे सामान्य प्रकृति की हैं और अभियोक्त्री की कहानी की सत्यता पर प्रश्न नहीं उठातीं। अपराध के तरीके और किए जाने के संबंध में मूल संस्करण स्थिर है।

iii. इसके अतिरिक्त, उच्चतम न्यायालय ने “पंजाब राज्य विरुद्ध गुरमीत सिंह” [(1996) 2 एससीसी 384] में, न्यायालय ने निम्नानुसार अवधारित किया:—

“21...एक हत्यारा अपने शिकार के तात्त्विक शरीर को नष्ट कर देता है, एक बलात्कारी असहाय स्त्री की आत्मा को अपमानित करता है। अतः बलात्संग के आरोप में अभियुक्तों पर विचारण चलाते समय न्यायालयों पर वृहत उत्तरदायित्व होता है। उन्हें ऐसे प्रकरणों का अत्यंत संवेदनशीलता के साथ निपटान करना चाहिए। न्यायालयों को प्रकरण की व्यापक संभावनाओं की जांच करनी चाहिए और अभियोक्त्री के कथन में सामान्य विरोधाभासों या महत्वहीन विसंगतियों से प्रभावित नहीं होना चाहिए, जो घातक प्रकृति के नहीं हैं, अन्यथा विश्वसनीय अभियोजन प्रकरण को खारिज करने के लिए। यदि अभियोक्त्री के साक्ष्य विश्वास को प्रेरित करते हैं, तो तात्त्विक विवरणों में उसके कथन की संपुष्टि किए बिना उस पर अवलंब किया जाना चाहिए। यदि किसी कारण से न्यायालय को उसके मौखिक साक्ष्य पर अंतर्निहित अवलंब करना कठिन प्रतीत होता है, तो वह ऐसे साक्ष्य की खोज कर सकता है जो उसकी साक्ष्य को आश्वासन दे सके, साथी के प्रकरण में आवश्यक संपुष्टि के अतिरिक्त अभियोक्त्री का साक्ष्य को प्रकरण की पृष्ठभूमि में देखा जाना



चाहिए। पूरे प्रकरण की सुनवाई होनी चाहिए और विचारण न्यायालय को अपने उत्तरदायित्व के प्रति सजग रहना चाहिए और लैंगिक उत्पीड़न से जुड़े प्रकरणों से निपटान में संवेदनशील होना चाहिए।

32. इस प्रकार, विद्वान विशेष न्यायाधीश (पोक्सो) द्वारा आक्षेपित निर्णय में लिया गया यह दृष्टिकोण स्वीकार्य है कि अभियोक्त्री के मौखिक साक्ष्य पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं है क्योंकि यह निष्कर्ष अभिलेख पर प्रस्तुत समस्त साक्ष्यों और साक्षियों की साक्ष्य पर विचार करने के उपरांत निकाला गया था। यह विधि की एक स्थापित स्थिति है कि अभियोक्त्री का कथन दोषसिद्धि का एकमात्र आधार हो सकता है जब तक कि न्यायालय के पास कथन पर विश्वास करने या संपुष्टि करने में संकोच करने के लिए ठोस कारण न हों। उच्चतम न्यायालय ने “हिमाचल प्रदेश राज्य विरुद्ध संजय कुमार” [(2017) 2 एससीसी 51] में अभिनिर्धारित किया कि:-

30...हम पूर्व ही इस बात पर चर्चा कर चुके हैं कि अभियोक्त्री का साक्ष्य की जांच और विश्लेषण किस प्रकार से किया जाना चाहिए ताकि उसमें सत्यता को ज्ञात किया जा सके और यह सुनिश्चित किया जा सके कि पीड़िता का कथन विश्वसनीय है। साथ ही, सभी आवश्यक सावधानियों को अपनाने के बाद, जब यह पाया जाता है कि अभियोजन का कथन विश्वास करने योग्य है, तो प्रकरण को ऐसे प्रकरणों में आवश्यक सभी संवेदनशीलता के साथ निपटान किया जाना चाहिए।

31...अब तक यह सुस्थापित हो चुका है कि लैंगिक अपराधों के प्रकरणों में पीड़िता की साक्ष्य महत्वपूर्ण है और जब तक ऐसे बंधनकारी कारण न हों जो कथन की संपुष्टि की खोज करने के लिए आवश्यक हों, न्यायालयों को अभियुक्त के एकमात्र दोषसिद्धि हेतु लैंगिक उत्पीड़न की पीड़िता की मौखिक साक्ष्य पर कार्यवाही करने में कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। निस्संदेह, उसका मौखिक साक्ष्य विश्वास प्रेरित करता हो ऐसे प्रकरणों में, एक नियम के रूप में, उसी पर अवलंब करने से पहले कथन की संपुष्टि की मांग करना, चोट पर नमक छिड़कने के समान होगा। अभियोक्त्री का न्यायालयीन कथन है इसलिए, इसे समग्र रूप में लिया जाना चाहिए। यह दोहराने की आवश्यकता नहीं है कि बलात्संग की पीड़िता कोई सहयोगी नहीं है और उसके साक्ष्य पर बिना संपुष्टि के भी कार्रवाई की जा सकती है। वह एक आहत साक्षी की तुलना में उच्च स्थान पर है। यदि न्यायालय को उसके कथन को स्वीकार करना कठिन प्रतीत होता है, तो वह कुछ ऐसे साक्ष्यों से संपुष्टि की मांग कर सकता है जो



उसके कथन को आश्वासन देते हैं। दुर्लभतम प्रकरणों को छोड़कर, संपुष्टि पर बल देना, किसी अन्य की वासना की शिकार स्त्री को अपराध में सहयोगी के समान मानना है और इस प्रकार नारीत्व का अपमान करना है। किसी स्त्री से यह कहना कि बलात्संग के उसके दावे पर तब तक विश्वास नहीं किया जाएगा जब तक कि उसे तात्त्विक विवरणों में संपुष्टि नहीं मिल जाती, जैसा कि अपराध में सहयोगी के प्रकरण में होता है, चोट पर नमक छिड़कने के समान है।

33. विधायिका ने उपरोक्त प्रावधान को ठोस तर्क के साथ प्रस्तुत किया है और इस प्रकार के प्रावधान के पीछे एक महत्वपूर्ण प्रयोजन है। यह माना जाता है कि अवयस्क तर्कसंगत रूप से सोचने और कोई सहमति प्रदान करने में असमर्थ है। इस कारण से, चाहे वह सिविल विधि हो या दाण्डिक विधि, अवयस्क की सहमति को वैध सहमति नहीं माना जाता है। यहाँ प्रावधान एक ऐसी बालिका के विषय में है जो न केवल अवयस्क है बल्कि 16 वर्ष से कम आयु की है। एक अवयस्क बालिका को इस प्रकार के कृत्य के लिए सहमति देने के लिए आसानी से बहकाया जा सकता है, बिना इसके निहितार्थों को समझे। इसलिए, ऐसी सहमति को पक्ष और विपक्ष के साथ-साथ इच्छित कार्य के परिणामों को समझने के उपरांत दी गई सूचित सहमति नहीं माना जाता है। अतः एक आवश्यक परिणाम के रूप में, 16 वर्ष से कम आयु की बालिका द्वारा दी गई तथाकथित सहमति का लाभ न उठाने का कर्तव्य दूसरे व्यक्ति पर डाला जाता है। यहां तक कि जब 16 वर्ष से कम आयु की बालिका की सहमति होती है, तब भी लैंगिक क्रिया में शामिल दूसरे साथी को अपराधी माना जाता है जिसने बलात्संग का अपराध किया है। विधि उसके लिए कोई विकल्प नहीं छोड़ता और वह यह अभिवाक नहीं कर सकता कि यह कृत्य सहमति से किया गया था। इसके अतिरिक्त, 16 वर्ष से कम आयु की अभियोक्त्री की तथाकथित सहमति को कम करने वाली परिस्थिति नहीं माना जा सकता।

34. यदि उपरोक्त वर्णित तरीके से समस्त तथ्यों को उचित परिप्रेक्ष्य में रखा जाए, तो हमें इसे ऐसे प्रकरण के रूप में देखना होगा, जिसमें अपीलार्थी ने अवयस्क बालिका के साथ बलात्संग किया है, जिसे जघन्य अपराध माना जाता है। लैंगिक उत्पीड़न के ऐसे कृत्य से घृणा की जानी चाहिए। यदि अवयस्क की सहमति को कम करने वाली परिस्थिति के रूप में माना जाता है, तो इससे विनाशकारी परिणाम हो सकते हैं। यह दृष्टिकोण तब और मजबूत हो जाता है, जब इसे लैंगिक अपराधों से बालकों के संरक्षण अधिनियम, 2012 के पीछे के अर्थ और भावना को विचार में रखा जाता है।

35. अभियोक्त्री (अ.सा.-3) के साक्ष्य पर विचार करते हुए, जिसने अपीलार्थी की भूमिका को विशेष रूप से व्यक्त किया है, उसके पिता (अ.सा.-5), माता (अ.सा.-4), प्राचार्य श्रीमती शोभा कश्यप (अ.सा.-10) के साक्ष्य और डॉ. रमा घोष (अ.सा.-9) के साक्ष्य, विशेषतः अभिलेख पर प्रस्तुत



सामग्री पर विचार करते हुए, अभियोक्त्री का मौखिक साक्ष्य उत्कृष्ट गुणवत्ता की है और इस न्यायालय का विश्वास प्रेरित करती है। इस न्यायालय को अभियोक्त्री के कथन को बदनाम करने या उस पर अविश्वास करने का कोई कारण नहीं मिला। इसके अतिरिक्त, अभियोक्त्री के कथन की भी विधिवत संपुष्टि की गई है।

36. जहां तक प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज करने में विलम्ब का प्रश्न है, लैंगिक उत्पीड़न के प्रकरण में विलम्ब की तुलना अन्य अपराधों से जुड़े प्रकरण से नहीं की जा सकती। पुलिस थाने में शिकायत दर्ज कराने आने से पूर्व अभियोक्त्री और उसके परिवार के सदस्यों के मन में कई बातें आती हैं। परम्परा से बंधे समाज में केवल इस आधार पर अभियोक्त्री के प्रकरण को खारिज करना पूर्णतः असुरक्षित होगा कि प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज करने में कुछ विलम्ब हुई है। अभियोक्त्री द्वारा अपीलार्थी को झूठा फंसाने का आशय भी नहीं बनता। अभियोक्त्री द्वारा किए गए कथन में स्पष्ट आरोप है कि अभियुक्त/अपीलार्थी ने उसके साथ बार-बार लैंगिक प्रवेशन संबंध बनाए।

37. लैंगिक अपराध न केवल शरीर पर बल्कि पीड़िता के मन पर भी अमिट छाप छोड़ता है। पीड़िता के सम्मान, गरिमा और मानस को पहुंचाई गई क्षति लैंगिक अपराध के स्पष्ट निशान मिट जाने के बाद भी जीवन भर उसे परेशान करती रहती है। यह तब और भी दर्दनाक हो जाता है जब ऐसा जघन्य कृत्य किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा किया जाता है, जो एक परिचित व्यक्ति है और वह उसे 'चाचा' कहती थी, परंतु उसका पीड़िता पर वैश्वासिक नियंत्रण था।

38. उपरोक्त तथा उच्चतम न्यायालय द्वारा उपरोक्त निर्णयों में प्रतिपादित विधि के दृष्टिगत, मेरा अभिमत है कि विद्वान विशेष न्यायाधीश ने अपीलार्थीगण को भारतीय दण्ड संहिता की धारा 363, 365, 366-क तथा पोक्सो अधिनियम की धारा 5(ठ)/6 के अधीन अपराध के लिए उचित रूप से सिद्धदोष किया है। मुझे विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित निष्कर्षों में कोई अवैधता और अनियमितता प्रतीत नहीं होती। दण्ड अधिरोपित करने का मूल प्रयोजन इस सिद्धांत पर आधारित है कि अभियुक्त को यह एहसास होना चाहिए कि उसके द्वारा किए गए अपराध ने न केवल उसके जीवन में एक कलंक लगाया है, बल्कि सामाजिक ताने-बाने में भी दरार डाली है। न्यायपूर्ण दण्ड का प्रयोजन यह है कि समाज में व्यक्ति जो अंततः सामूहिक रूप से बनते हैं, ऐसे अपराधों के लिए बार-बार पीड़ित न हों, क्योंकि यह एक निवारक के रूप में कार्य करता है। दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के अधीन अभियोक्त्री के कथन में दृढ़ता को विचार में रखते हुए। न्यायालय के समक्ष किए गए कथन और कथन जो कि ठोस, स्पष्ट और स्पष्टता से व्यक्त किए गए हैं, यह निष्कर्ष निकालने का कोई कारण नहीं है कि उसका साक्ष्य मनगढ़ंत या अविश्वसनीय था।



39. उपरोक्त अवलोकन के दृष्टिगत और उपरोक्त कारणों से, मुझे विद्वान विशेष न्यायाधीश (पोक्सो अधिनियम) के आदेश में कोई त्रुटि या अनियमितता प्रतीत नहीं होती है और मैं दिनांक 13.02.2019 को दोषसिद्धि एवं दण्डादेश के आक्षेपित निर्णय में हस्तक्षेप करने हेतु इच्छुक नहीं हूँ। अपील गुणानुगुण रहित है एवं तदनुसार खारिज की जाती है।

40. अपीलार्थी की भारतीय दण्ड संहिता की धारा 363, 365, 366-क और लैंगिक अपराधों से बालकों के संरक्षण अधिनियम, 2012 की धारा 5 (ठ)/6 के अधीन दोषसिद्धि को यथावत रखा जाता है। पहले से ही जेल में निरुद्ध होने के कारण, अभियुक्त/अपीलार्थी की गिरफ्तारी आदि के संबंध में किसी आदेश की आवश्यकता नहीं है।

सही / -

(अरविंद कुमार वर्मा)

न्यायाधीश



(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण: हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।